www.darshanparishadbihar.org

ISSN : 0975-2749

दार्शनिक अनुगूंज

A Bilingual Refereed Journal of Research

वर्ष–16 जनवरी–जून, 2022 अंक– 1

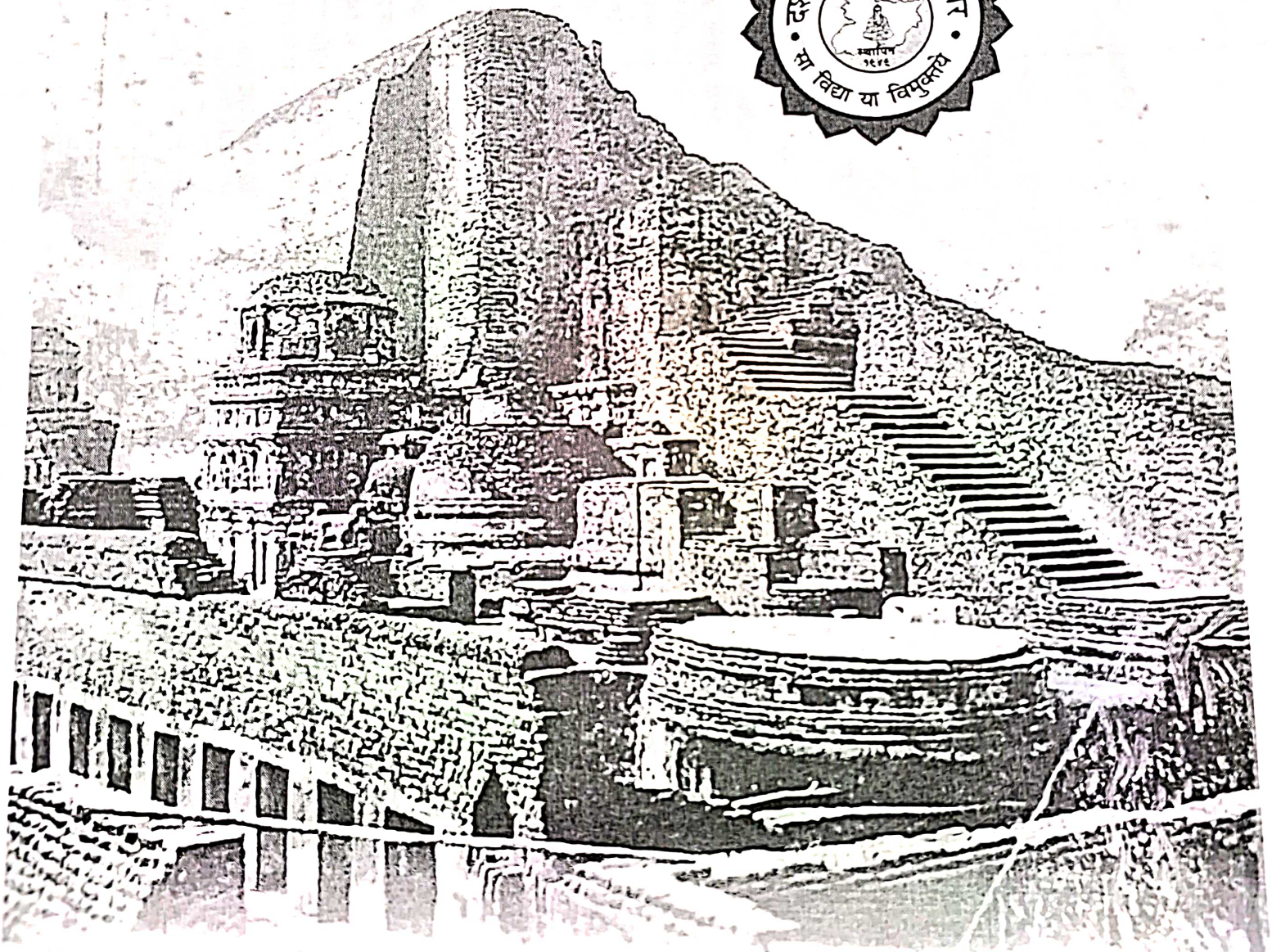

दर्शन परिषद्, बिहार

दार्शनिक अनुगूंज (अभिनिर्णित, शोध पत्रिका)
वर्ष 16, अंक : 1, जनवरी-जून, 2022
ISSN : 0975-2749

सामाजिक संरचना एवं भारतीय दर्शन की गतिशीलता

डॉ. स्मिता कुमारी*

सामाजिक संरचना की अवधारणा का सर्वप्रथम प्रयोग हरबर्ट स्पेसर ने अपनी पुस्तक में प्रिंसिपल ऑफ सोसियोलॉजी में किया। दुर्खीम ने अपनी कृति द रूल्स ऑफ सोसियोलॉजिकल मेथड में इस अवधारणा का प्रयोग किया।

संरचना शब्द से आशय इकाईयों की क्रमबद्धता से है। इकाईयों का एक ऐसा प्रतिमानित संबंध जो अपेक्षाकृत स्थिर होता है, संरचना कहलाता है। दूसरे शब्दों में सामाजिक संरचना का अर्थ है—समाज के वर्तमान सामाजिक संबंधों का ऐसा अंतर्बंधन जिसमें कुछ स्थायित्व हो।

सामाजिक संरचना के अंग मनुष्य है। मनुष्य से ही समाज का निर्माण होता है। इसलिए मनुष्य के मूल्य, विचार या दर्शन की क्रमबद्धता सामाजिक संरचना का अंग है। भारतीय दर्शन में निहित ईश्वर विचार, जगत विचार, आत्मा विचार, कर्म विचार, पुनर्जन्म विचार, वर्ण व्यवस्था, पुरूषार्थ, मूल्य विचार, योग विचार का प्रभाव मनुष्य पर पड़ता है तथा मनुष्य सामाजिक संरचना को प्रभावित करता है। जिस तरह के विचारों, मूल्यों या दर्शन के बीच मनुष्य रहता है उसी तरह का सामाजिक संरचना का निर्माण होता है। इसलिए भारतीय दर्शन की विचारों की गतिशीलता का प्रभाव सामाजिक संरचना पर पड़ता है।

पारसन्स का विचार है कि प्रत्येक समाज में मूल्यों का अत्यधिक महत्व होता है। मूल्य ही समाज की संरचना को निर्धारित करते हैं। इस मूल्य निर्धारण में भारतीय दर्शन का महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि यह व्यावहारिक दर्शन है। यहाँ कर्म सिद्धान्त, ऋण विचार, संस्कार–चिंतन तथा पाप–पुण्य, एवं धर्म–अधर्म आदि विषयों पर सूक्ष्म और गहन विचार किया गया है। भारतीय दर्शन में नैतिकता संबंधी विमर्श में शाब्दिक विश्लेषणों पर बहुत बल नहीं देकर आत्मिक अनुभवों पर अत्यधिक जोर दिया गया है। चूँकि भारतीय दर्शन हमेशा जीवन की सम्पूर्णता में विचार करती है। इहलोक के साथ–साथ परलोक, वर्तमान के साथ–साथ भविष्य

43वें अधिवेशन के संगोष्ठी में प्रस्तुत शोध–पत्र

* सहायक प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग, एम.एम. महिला कॉलेज, आरा

और अभ्युदय के साथ–साथ निःश्रेयस पर विचार किया जाना और इनकी सिद्धि के लिए नैतिक अवधारणाओं का प्रतिपादन इसी समग्रतावादी चिंतन का सबूत है। इसी कारण इन नैतिक अवधारणाओं में व्यक्ति–समाज, अमीर–गरीब, शिक्षित–अशिक्षित, स्त्री–पुरूष और बच्चे–बूढ़े आदि सबके हित और कल्याण की बात की गई हैं।

प्रो. हरियाना ने कहा है "भारतीय दर्शन सिर्फ सोचने की पद्धति न होकर जीवन की पद्धति है।"[1] चार्ल्स मूर और डॉ. राधाकृष्णन् ने भी कहा है कि "भारत में दर्शन जीवन के लिए है।"[2]

भारतीय दर्शन का मुख्य विभाजन चार कालों में हो सकता है–

1. वैदिक काल, 2. महाकाव्य काल, 3. सूत्र काल और 4. वर्तमान तथा समसामयिक काल।

वैदिक काल : भारतीय दर्शन का प्राचीनतम एवं आरंभिक अंग वैदिक काल है। इस काल में वेद और उपनिषदों जैसे महत्वपूर्ण दर्शनों का विकास हुआ। वेद चार है–1. ऋग्वेद 2. यजुर्वेद 3. सामवेद 4. अथर्ववेद।

ऋग्वेद में उन मंत्रों का संग्रह है जो देवताओं की स्तुति के निमित्त गाये जाते थे। जिसे आज भी मनुष्य पूजा पाठ में अपनाते हैं। यजुर्वेद में यज्ञ की विधियों का वर्णन है। आज भी किसी भी पूजा पाठ में यज्ञ को महत्व दिया जाता है। सामवेद संगीत प्रधान है। अथर्ववेद में जादू टोना, मंत्र–तंत्र निहित हैं। ये सभी आज भी समाज में निहित है। वैदिक काल के लोगों ने अग्नि, सूर्य, उषा, पृथ्वी, मरूत, वायु, इंद्र, वरूण आदि देवताओं की कल्पना की है। इसे आज भी हिन्दू–धर्म में माना जाता है। प्रत्येक वेद के तीन अंग है। वे हैं–मंत्र, ब्राह्मण और उपनिषद्। संहिता मंत्रों का संकलन है। ब्राह्मण में कर्मकाण्ड की मीमांसा है। उपनिषद में दार्शनिक विचार पूर्ण है। इसके अध्ययन से मानव जन्म–मरण के बंधन से मुक्त हो जाता है। यह संकट काल में मानव का मार्ग–प्रदर्शन का काम करती है। इसलिए सामाजिक संरचना में इसका महत्व अमूल्यनीय है।

महाकाव्य काल : यह भारतीय दर्शन का दूसरा काल है। इस काल में रामायण और महाभारत जैसे धार्मिक एवं दार्शनिक ग्रंथों की रचना हुई है। बौद्ध और जैन धर्म भी इसी काल की देन है। रामायण और महाभारत की कहानी आज सभी मनुष्य के लिए रोचकपूर्ण एवं शिक्षापूर्ण है। रामायण हिन्दू धर्म का महत्वपूर्ण ग्रंथ है। महाभारत में निहित गीता ज्ञान को अधिकांशतः घरों में पढ़ा जाता है।